[डा० कृष्णस्वामी]

पर भारतीय उद्भव की जनसंख्या को लंका के अन्य राजनैतिक दलों के साथ सक्रिय रूप से सम्बद्ध करने के लिए कोई सक्रिय पग नहीं उठाये गये । यदि उन के और लंका के नागरिकों के हितों को एक करने के लिए ठोस पग न उठाये, तो हमारी प्रतिष्ठा को हानी पहुंचेगी । इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये मैं सरकार से यह सिफारिश करूंगा कि हमें एक सद्भावना मंडल जिस में भारत के सब राजनीतिक दलों के प्रतिनिधि हों, लंका भेजना चाहिये और प्रधान मंत्री से निवेदन करूंगा कि वे हमारे उच्चायुक्त को सतर्क रहने का निदेश दें, ताकि दोनों देश इस करार से लाभ उठा सकें ।

नौकरी के मामले में, मैं इस बात पर सहमत नहीं हूं कि इस की स्थिति देश में सुधर गई है । अर्थ व्यवस्था की स्थिति पहले की तरह गतिहीन है और विनियोग भी नहीं बढ़ा । इस अवस्था में यह कैसे कहा जा सकता है कि नौकरी सम्बन्धी स्थिति में सुधार हो गया है ।

बम्बई सरकार ने आंग्ल-भारतीय बच्चों को अन्य जातियों के बच्चों से पृथक करने का जो आदेश हाल में जारी किया है, उस से धर्मनिर्पेक्ष राज्य की धारणा को बहुत धक्का लगेगा और राज्य के इस स्वरूप को बनाये रखना भी कठिन हो जायेगा । संविधान में यह उपबन्ध है कि सब राज्यों और संघ में १५ वर्ष तक अंग्रेजी का स्थान बना रहेगा। जब संघ का एक एक कार्यपालिका आदेश द्वारा इस नीति को संशोधित करता है, तो हम यह मांग कर सकते हैं कि संघ सरकार इस सम्बन्ध में अपने विचारों तथा दृष्टिकोण को स्पष्ट करे, क्योंकि किसी राज्य की कार्यवाही का प्रभाव सारे धर्मनिर्पेक्ष राज्य पर पड़ सकता है ।

कुम्भ मेले की दुर्घटना के सम्बन्ध में मैं कोई कठोर शब्द नहीं कहना चाहता, क्योंकि यह एक बहुत दुखदायक बात है । मैं केवल इतना पूछना चाहूंगा कि क्या यह कहना ठीक है, कि जो कुछ हुआ है, उस का उत्तरदायित्व हम पर नहीं है ? यदि केन्द्रीय सरकार हैज़े का टीका लगाने के मामले में प्रतिबन्ध पर अग्राह करती, तो इतने लाख आदमी वहां इकट्ठे न होते और न यह महान दुर्घटना होती ।

श्री जवाहर लाल नेहरू : श्रीमान्, मैं आपका आभारी हूं कि आपने मुझे बहस की इस अवस्था पर बोलने का अवसर दिया । पिछले कुछ दिनों में यहां पर अनेक भाषण दिये गये हैं तथा विविध विषयों पर चर्चा हुई है । उन सब विषयों के सम्बन्ध में मेरे लिये कुछ कहना कठिन होगा इसलिये आपकी अनुमति से मैं उन में से केवल कुछ ही विषयों पर बोलूंगा ।

मेरे विचार में सब से पहले मैं उसी बात को दोहरा दूं जो मैं ने राष्ट्रपति के अभिभाषण के बारे में कही थी । आचार्य कृपालानी ने कहा था कि राष्ट्रपति का अभिभाषण 'औपचारिक' था न कि 'प्रेरणात्मक' अन्य लोगों ने भी कुछ ऐसे ही बातें कही हैं । मेरे विचार में राष्ट्रपति का अभिभाषण औपचारिक ही होता है । निस्सन्देह, प्रेरणात्मक होना ही सदा ठीक होता है किन्तु प्रेरणा का मिलना इतना आसान नहीं है जितना कि उसे व्यक्त करना । राष्ट्रपति का अभिभाषण औपचारिक होता है और उसके लिये स्वभावतः सरकार ही ज़िम्मेदार होती है । बहुधा, माननीय सदस्यों तथा प्रेस ने

आलोचना करते हुये कहा है कि राष्ट्रपति के अभिभाषण में वही बातें दोहराई जाती हैं जो सरकार ने पहले ही कही होती है। इस के अलावा हम कर भी क्या सकते हैं? यह सरकारी नीति का विवरण होता है जिसे राष्ट्रपति दोनों सदनों के संयुक्त सत्र के समक्ष रखते हैं। इसके अलावा यह कुछ और ही भी नहीं सकता। साधारणतः यह सनसनी-खेज नहीं हो सकता ना ही इसमें कोई नई बात कही जा सकती है। यदि सरकार को कोई हमत्वपूर्ण कदम उठाना होगा तो स्वाभावतः वह इस सदन के सामने आयेगी, और उस विषय पर यहां चर्चा होगी न कि वह राष्ट्रपति के अभिभाषण में ऐसी कोई सनसनीखेज बात शामिल करा दी जायेगी। अतः मेरा सदन से निवेदन है कि वह राष्ट्रपति के अभिभाषण को उस दृष्टिकोण से देखे जिस दृष्टिकोण से वह दिया जाता है।

माननीय सदस्य, श्री जयपाल सिंह ने कहा कि राष्ट्रपति के अभिभाषण में कोई विवादग्रस्त बात न उठाई जानी चाहिये। मैं उन से सहमत हूं क्योंकि यदि राष्ट्रपति के अभिभाषण में विवाद ग्रस्तविधानों का निर्देश किया गया तो यह विवादग्रस्त मामला हो जायेगा। उन्होंने हमें एक उदाहरण भी दिया था---अभिभाषण में कुम्भ मेले की दुर्घटना का निर्देश। उन्होंने कहा था कि राष्ट्रपति ने उत्तर प्रदेश सरकार को शाबाशी दी है। वास्तव में मुझे यह सुन कर आश्चर्य हुआ था और मैंने फिर से अभिभाषण को पढ़ा था। राष्ट्रपति ने इस सम्बन्ध में केवल इतना ही कहा था कि उत्तर प्रदेश सरकार ने इस प्रकार जन समूह के लिये संतोषजनक प्रबन्ध करने में काफी मेहनत की थी। लेकिन फिर भी, गड़बड़ी हो गई। मैं नहीं जानता कि कोई भी इस बारे में यह कैसे कह सकता है कि दूरदर्शिता से काम नहीं लिया गया था। इस बात को तो कोई झूठा साबित कर ही नहीं सकता कि वहां की सरकार ने काफी मेहनत की थी यह दूसरी बात है कि वह असफल रही या बाद में गलतियां हो गईं। यह विवादग्रस्त मामला नहीं है मैं उनसे इस बात में सहमत नहीं हूं। दुर्भाग्यवश, इस बहस में कुम्भ मेले की दुर्घटना प्रबल रूप से छा गई है, मैं मानता हूं कि यह एक दुखद दुर्घटना थी फिर भी, इसका उन बातों से बहुत कम सम्बन्ध है जिनके बारे में हम यहां पर चर्चा कर रहे हैं।

जैसा कि मेरे माननीय मित्र श्री टंडन ने कहा हमें जांच के परिणामों की प्रतीक्षा करनी चाहिये। जांच की जा रही है। इस के एक पहलू के बारे में, जिसके सम्बन्ध में आचार्य कृपालानी ने विशेष कर जोर दिया मैं बाद में कुछ कहूंगा। परन्तु जिन मख्य विषयों को लेकर हमें यहां चर्चा करनी है वे मेरे विचार में काफी बड़े विषय हैं चाहे वे अन्तर्राष्ट्रीय हों या घरेलू और इसी लिये हमें उन छोटी छोटी बातों में नहीं जाना चाहिये जिनके सम्बन्ध में हम और किसी समय भी चर्चा कर सकते हैं।

यदि आप संसार पर दृष्टि डालें तो आप देखेंगे कि लोगों को अनेक समस्याओं, तनातनी और भय का सामना करना पड़ रहा है। लोग भयभीत हैं और सुरक्षा की खोज में लगे हुये हैं; किन्तु, दुर्भाग्यवश, जितना ही वे सुरक्षा की खोज करते हैं उतना ही संसार में तनातनी बढ़ती जाती है। स्पष्ट है कि कोई भी देश, यहां तक कि संसार का सबसे ताकतवर देश भी, अपनी ही बात नहीं मनवा सकता है, फिर भारत जैसे देश का तो कहना ही क्या है जो कि न तो सैनिक और न ही वित्तीय दृष्टि से ताकतवर है। हां, उसके पास एक ताकत है, यदि आप इसे ताकत कह सकते हैं, और वह है कुछ चीजों में हमारा विश्वास। अतः

[श्री जवाहर लाल नेहरु]

हो सकता है हमें जो बातें अच्छी न लगती हों उनके बारे में हम शिकायत करते हों, किन्तु हमें हर बात को इसके वास्तविक रूप में देखना चाहिये कि क्या किया जा सकता है और क्या नहीं तथा हमें अपनी ओर से पूरा प्रयास करना चाहिये। हम हरदम ही उन परिणामों को प्राप्त नहीं कर सकते हैं जिनकी हम आशा करते हैं। लेकिन, फिर भी, मेरा विश्वास है कि यदि हम अपनी पूरी कोशिश करें तो उसका अच्छा परिणाम निकल सकता है।

आज हमें एशिया में विशेष समस्याओं का सामना करना पड़ता है। क्योंकि हम मध्य में स्थित हैं इसीलिये अन्य कारणों के अलावा भी भौगोलिक दृष्टि से हमारा इन समस्याओं से सम्बन्ध है—एशिया के पश्चिम तथा दक्षिण पूर्व और पूर्व दोनों ही में। हमारे देश के आकार, आबादी, संसाधनों आदि के अलावा भी हमें इस जिम्मेदारी को उठाना पड़ता है। इसीलिये कभी कभी हमें बाहरी मामलों में उलझ जाना पड़ा है यद्यपि हमने इस बात की पूरी पूरी कोशिश की है कि हम ऐसे मामलों के चक्कर में न आयें।

सदन को मालूम ही है कि केवल कल ही हमारे कुछ सैनिक, जिन्हें कोरिया भेजा गया था, वापस लौटे हैं। अन्य लोग भी कुछ दिनों में लौट रहे हैं तथा कोरिया का वह अध्याय समाप्त हो चुका है जिसमें हमारा संरक्षक कटक तथा हमारे प्रतिनिधियों ने तटस्त राष्ट्र प्रत्यावर्तन आयोग में काम किया था। मझे अब उसके सम्बन्ध में और अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। अधिकतर बातें माननीय सदस्यों को मालूम ही हैं। वे प्रेस में प्रकाशित हो चुकी हैं। म आशा करता हूं कि कुछ दिनों के बाद मैं सदन-पटल पर एक विवरण रख सकूंगा जो कि वास्तव में, कोरिया के सम्बन्ध में अभिलेख का काम देगा न कि अतिरिक्त सूचना का।

तटस्थ राष्ट्र प्रत्यावर्तन आयोग ने जो उद्देश्य अपने आगे रखा था वह उसे प्राप्त नहीं कर सका है या पूरी तरह से प्राप्त नहीं कर सकता है तथा दुर्भाग्यवश, बहुत सी समस्यायें वैसी की वैसी ही पड़ी हैं। यह एक दुर्भाग्य की बात है मेरे विचार में अधिकतर लोग इस बात से सहमत हैं कि आयोग में हमारे प्रतिनिधियों ने जिन्हें बहुत ही नाजुक काम करना था, तथा हमारे संरक्षक कटक ने उतना ही अच्छा काम किया जितना कि उनसे आशा की जा सकती थी और मेरे विचार में उसका परिणाम यह हुआ है कि यद्यपि हमारे प्रतिनिधियों ने जो दृष्टिकोण अपनाया था उसके सम्बन्ध में मतभेद हो सकते हैं फिर भी, समस्त पक्षों ने काम में उनकी निष्पक्षता की सराहना की है। (हर्षध्वनि)। सदन द्वारा हर्ष ध्वनि किये जाने से पता लगता है कि सदन उनके लौटने के सम्बन्ध में अपनी शुभ कामनायें भेजना चाहता है।

यद्यपि समस्त समस्यायें वैसी ही पड़ी हैं फिर भी कोरिया के सम्बन्ध में एक अच्छी बात हुई है अर्थात्, वहां जो लड़ाई दो या तीन वर्षों से चल रही थी वह रुक गई है; कम से कम नर हत्या तो समाप्त हो गई है। केवल समस्यायें हल करने को पड़ी ह, चाहे वह कठिन समस्यायें ही हैं।

इस सम्बन्ध में मैं एक बात कहना चाहता हूं। कदाचित्, सदन को मालूम है कि बहुत सी बातों के सम्बन्ध में मतभेद था, विशेष कर इस सम्बन्ध में कि आयोग उन युद्धबन्दियों के बारे में क्या करे जो उसके साथ रह गये थे। अध्यक्ष, अर्थात्, भारत के प्रतिनिधियों की राय थी कि दोनों

पक्षों के बीच हुये समझौतों में जिन जिन प्रक्रियायों का निर्धारण किया गया था वे पूरी नहीं हुई थीं ; फिर भी, आयोग के पास इस के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं रह गया था कि वह उन युद्धबन्दियों को उनके बन्दी-कर्त्ताओं को लौटा दे ।

पिछले कुछ दिनों में हमें एक विशेष कठिनाई का अनुभव करना पड़ा था । १७ व्यक्ति ऐसे थे--मुझे संख्या का ठीक ठीक ज्ञान नहीं है--जिनके ऊपर भयंकर अपराधों के लिये, जिसमें हत्या करना भी शामिल था, मुकदमा चलाया जा रहा था । उन पर मुक-दमा हमारे सशस्त्र बल द्वारा स्थापित किये गये फौजी-न्यायालय में चलाया जा रहा था । दुर्भाग्यवश, कुछ पक्षों द्वारा सहयोग न दिये जाने के कारण यह कार्यवाही पूरी न हो सकी । परिणामस्वरूप यह समस्या उत्पन्न हुई कि इन व्यक्तियों के साथ क्या किया जाये जिन पर भयंकर अपराध करने का दोष लगाया गया था । यह तो स्पष्ट ही हो गया था कि भारतीय संरक्षक कटक फौजी-न्यायालय की कार्यवाही जारी नहीं रख सकता था क्योंकि उसे वहां नहीं रहना था । वह उन्हें अपने साथ भारत भी नहीं ला सकता था । दूसरी ओर, यह भी ठीक प्रतीत होता था कि उन व्यक्तियों के मुकदमे की कार्यवाही जिन पर इस प्रकार के अपराध करने का दोष लगाया गया था, पूरी की जाये तथा इसके बाद जैसा भी हो, उनको सजा दी जाये या छोड़ दिया जाये । अतः इस दुविधा में भारतीय संरक्षक कटक ने यह निश्चय किया कि उन व्यक्तियों को उनके बन्दीकर्त्ताओं को ही लौटा दिया जाये तथा साथ ही उनसे इस बात की जोर-दार अपील की जाये कि वे मुकदमे की कार्यवाही को पूरा करें । मैं नहीं जानता कि वास्तव में उनके साथ क्या किया जायेगा किन्तु मैं अनुभव करता हूं कि यह न्याय का उपहास करना होगा यदि इन व्यक्तियों को जो प्रत्यक्षतः इस बात के दोषी ठहराये गये हैं कि उन्होंने भयंकर अपराध किये हैं केवल छोड़ दिया जाये ।

मैं ने कोरिया का निर्देश किया किन्तु संसार में अनेक ऐसे स्थान हैं जहां अजीब ही मसले खड़े हो गये हैं । जैसा कि सदन को मालूम ही है, हाल ही में, चार बड़ी ताकतों का बर्लिन में सम्मेलन हुआ था और उन्होंने कई दिनों तक जर्मनी, आस्ट्रिया आदि के बारे में बातचीत की । दुर्भाग्यवश, इस बातचीत का कोई ठोस परिणाम नहीं निकला । केवल एक चीज़ हुई और वह यह कि अन्त में चार बड़ी ताकतें इस बात पर सहमत हो गईं कि कोरिया और हिन्द-चीन की समस्याओं पर विचार करने के लिये २६ अप्रैल को जिनेवा में एक सम्मेलन बुलाया जाये । मेरा अनुमान है कि चीनी सरकार ने इस प्रक्रिया को स्वीकार कर लिया है क्योंकि इसका इससे बहुत निकट का सम्बन्ध है और उसका वहां उप-स्थित रहना आवश्यक भी है ।

मैं ने अभी कहा कि चाहे कोरिया में कोई भी कठिनाई बिना हल हुये क्यों न पड़ी रही हो, किन्तु यह तो सत्य ही है कि युद्ध रुक गया है । यह एक बहुत बड़ी बात है ।

दुर्भाग्य से हिन्दचीन में लड़ाई अभी बन्द नहीं हुई है, बल्कि भयंकर रूप धारण करती जा रही है । वहां की लड़ाई शुरू हुये आज छः वर्ष हो गये हैं । मैं इसके बारे में इस समय कुछ कहना नहीं चाहता, क्योंकि वैसे तो हम सब यही चाहते हैं कि वहां लड़ाई शीघ्र से शीघ्र बन्द हो, परन्तु चूंकि दो महीने बाद बड़ी शक्तियां इस मामले पर विचार करने जा रही हैं, इसलिये इस समय कुछ कहना उचित प्रतीत नहीं होता । यह बड़े अफसोस की बात है कि जब इस समस्या को

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

हल करने का प्रयत्न किया जा रहा है तब भी वहां यह लड़ाई चल रही है। मैं इस विषय में कोई सुझाव देना नहीं चाहता। न ही मैं बीच में पड़ना चाहता हूं, परन्तु सम्बन्धित पक्षों और शक्तियों से इतना ज़रूर कहना चाहता हूं कि चूंकि दो महीने बाद जिनेवा सम्मेलन में हिन्दचीन के मामले पर बहस की जाने वाली है इसलिये यह अच्छा होगा कि दोनों पक्ष अपनी अपनी स्थिति पर जमे रह कर और बिना अपने अधिकारों आदि पर बहस किये किसी तरह की विराम संधि कर लें, क्योंकि यदि एक दफ़ा बहस शुरू हो गई तो फिर उसका खत्म होना मुश्किल हो जायेगा। इसलिये मैं सम्बन्धित राष्ट्रों से विनम्रतापूर्वक यह अपील करता हूं—और मेरा विश्वास है कि सदन भी इस अपील में मेरे साथ है—कि वे वहां विराम संधि करने के लिये पूरा प्रयत्न करें। इसके बाद वे अपने अपने तरीके से उस पर विचार कर सकते हैं। मैं फिर यह बात दोहराता हूं कि जहां तक हमारा सम्बन्ध है हम इस मामले में हस्तक्षेप करने या किसी प्रकार की जिम्मेदारी लेने की इच्छा नहीं रखते।

कोरिया युद्ध से और इस हिन्दचीन की लड़ाई से—वास्तव में उन सब जगहों से जैसे मलाया में और अफ्रीका के कुछ भागों में जहां इस तरह की लड़ाई तो नहीं हो रही परन्तु फिर भी कुछ न कुछ सैनिक कार्यवाही चल ही रही है—हम यह देख सकते हैं कि आजकल यदि कहीं एक छोटी सी लड़ाई भी शुरू हो जाती है तो वह बराबर चलती ही रहती है; उसे रोकना बहुत मुश्किल हो जाता है। इस तरह की कार्यवाहियों से इन समस्याओं का हल निकालना सरल नहीं होता। हिन्दचीन में हमने देखा है कि इन पिछले दो वर्षों में हार जीत का पलड़ा स्थिर नहीं रहा है, कभी एक पक्ष आगे बढ़ता है कभी दूसरा। मैं यह नहीं जानता कि सैनिक स्थिति वास्तव में क्या है परन्तु यह चीज़ सब जानते हैं कि पिछले पांच वर्षों से ये लोग बिना किसी नतीजे पर पहुंचे एक दूसरे को मारने काटने में लगे हुये हैं। स्वयं इस चीज़ से हम कुछ निष्कर्ष निकाल सकते हैं। यदि हम इन छोटी छोटी लड़ाइयों में सैनिक साधनों द्वारा किसी नतीजे पर नहीं पहुंच सकते तो, यदि दुर्भाग्य से विश्व युद्ध आरंभ हो जाये, फिर क्या नतीजा होगा? क्या उसका कभी अन्त न होगा और क्या उसका कोई परिणाम नहीं निकलेगा, या फिर क्या होगा? आजकल एक छोटी सी लड़ाई भी शुरू करना खतरनाक है। लोग इसे मामूली चीज़ समझ सकते हैं परन्तु ऐसा होता नहीं है। चाहे मामले की अच्छाइयां और बुराइयां कुछ भी हों, लड़ाई चलती ही रहती है। इसलिये हिन्दचीन में ही नहीं अन्य सब जगहों में भी, जिनका मैं ने ज़िक्र किया है, कुछ और तरीक़ा अपनाया जाना चाहिये जिससे यह मार-काट बन्द हो क्योंकि इससे हज़ारों लोगों की जान ही नहीं जाती बल्कि इसके परिणामस्वरूप कठोरता और कलह की भावना पैदा हो जाती है जिसे दूर करना बड़ा कठिन होता है। सैनिक कार्यवाही के परिणाम का कोई महत्व नहीं रह जाता। जब लोगों के दिलों में डर और कठोरता समा जाती है क्योंकि इससे आगे चल कर और झगड़े खड़े हो जाने की संभावना बनी रहती है और इस तरह इसका कोई अन्त नहीं होता। वैयक्तिक रूप से मुझे यह विश्वास है कि चाहे लड़ाई छोटी हो या बड़ी इससे समस्याओं का हल नहीं निकाला जा सकता। इसलिये मैं छोटे बड़े समस्त सम्बन्धित राष्ट्रों से अपील करता हूं कि वे इस दिशा

में प्रयत्न करें और अभी कम से कम युद्ध बन्द कराने के लिये ही कुछ उपाय ढूंढें ।

मैं अब हाल ही में हुये बर्लिन सम्मेलन का ज़िक्र करूंगा। मुझे खेद है कि इस सम्मेलन के अन्तिम फ़ैसले के अलावा, जिसमें जिनेवा में एक सम्मेलन बुलाने का निश्चय किया गया है, इससे निराशा ही हुई है। लेकिन मैं कहूंगा कि यद्यपि बर्लिन सम्मेलन से कोई नतीजा नहीं निकला है, फिर भी इसका एक फ़ायदा हुआ है। लोगों के इस तरह मिलने-जुलने और साथ बैठ कर विचार करने से न सिर्फ़ लड़ाई जैसी भयंकर चीज़ें ही हटाई जा सकती हैं बल्कि इससे यह भी प्रकट होता है कि इन लोगों के दिलों में शान्तिपूर्ण समझौते ढूंढने की इच्छा है । मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि सारे देशों के लोग शान्ति चाहते हैं; वे यही नहीं चाहते कि गोली बारूद की लड़ाई न हो, बल्कि वे वास्तविक शान्ति की इच्छा रखते हैं। आप देशों के बीच शीत-युद्ध देखते होंगे । निस्सन्देह शीत-युद्ध वास्तविक युद्ध से कहीं अच्छा है, परन्तु फिर भी शीत-युद्ध एक काफी बुरी चीज़ है। इससे लोगों में डर बना रहता है ओर सुरक्षा के लिए ख़तरा बना रहता है और एक तनाव सा पैदा हो जाता है। देश की आर्थिक व्यवस्था डावांडोल हो जाती है और राजनैतिक स्थिति में खिंचाव, घृणा और हिंसा का भय उत्पन्न हो जाता है ।

मुझे यह सोच कर बड़ी परेशानी होती है कि यह पीढ़ी, जो बराबर शीत-युद्ध का दृश्य देखती है और वास्तविक युद्ध की संभावना तथा घृणा और खिंचाव के वातावरण में ही रह रही है, आगे चल कर क्या करेगी। मैं आगे की बात सोच कर थर्रा उठता हूं । कुछ दिन पहले माननीय सदस्यों ने दिल्ली में 'शंकर्स वीकली' द्वारा आयोजित बाल कला प्रदर्शनी देखी होगी जिसमें दुनिया के सारे देशों से बच्चों ने अपने हज़ारों चित्र भेजे थे। कलात्मक गुणों के अलावा चित्रों के इस असाधारण संग्रह से हमें इस बात का आभास मिलता था कि विभिन्न देशों के बच्चों का क्या दृष्टिकोण है और वे किस प्रकार विचार करते हैं। बहुत से बच्चों ने इस तरह के कुछ आतंकपूर्ण चित्र बनाये थे जिन्हें देख कर ऐसा लगता था मानो वे स्वयं उस आतंक से पीड़ित हों। उससे प्रकट होता था कि किस प्रकार ये लोग घृणा, हिंसा और संभावित युद्ध आदि के वातावरण में रह रहे हैं और किस प्रकार उनकी मनोवृत्ति वैसी हो रही है । ऐसा प्रतीत होता है जैसे सारा विश्व किसी दुष्ट मायावी प्रभाव से ग्रस्त है जिसके कारण हम शान्ति और सद्भावना से जीवन बिताने में असमर्थ हैं और हम इस प्रभाव से अलग भी नहीं हो सकते। हम एक दूसरे के साथ मिल कर बैठते हैं और बातचीत करते हैं ताकि हमारी समस्याओं को सुलझाया जा सके परन्तु कुछ ऐसी बात होती है कि समस्यायें और जटिल ही होती जाती हैं । दुनिया के लोगों के सामने असली कठिनाई यही है और एशिया में हमारे लिये यह कठिनाई और भी विषम है क्योंकि यहां और कुछ हद तक अफ्रीका में भी, नये प्रभाव तथा नई भावनायें फैल रही हैं। हम विश्व की समस्याओं में रुचि रखते हैं क्योंकि उनका हम पर असर होता है परन्तु हमें एशिया की समस्याओं में खास दिलचस्पी है क्योंकि हम एशिया के अंग हैं। अफ्रीका की समस्याओं से भी हमारा कई कारणों से संबंध है, जिनमें से एक छोटा सा कारण यह है कि वहां बहुत से भारतीय रहते हैं और हमें उनमें रुचि है । परन्तु वास्तविक समस्यायें विदेश स्थित भारतीयों की ही नहीं हैं, वहां रहने वालों की भी हैं। मैं यह कह सकता हूं कि इन में से कई समस्या ज़ोर-ज़बरदस्ती से हल नहीं की जा कती । पिछले ज़माने में जिन शक्तियों

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

को दबाया जा सकता था वे अब दब कर नहीं रह सकतीं। मेरी जो सहानुभूतियां हैं और सदन के जो विचार हैं वे तो स्पष्ट हैं परन्तु इनके अलावा वास्तविक स्थिति यह है और मेरी धारणा भी यही है कि एशिया में या अफ्रीका में या कहीं और राष्ट्रीयता एवं स्वतंत्रता की जो भावनायें जागृत हुई हैं उन्हें अब कुचला नहीं जा सकता। इन देशों में जातीयता के विरुद्ध जो भावना है, उसे भी मैं यहां शामिल करूंगा।

तो यह स्थिति है। सदन हमारी नीति को जानता है। कभी कभी इसे तटस्थ नीति कहा जाता है और यह भी कहा जाता है कि हम डरते हैं और हम में अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ रहने की शक्ति नहीं। हो सकता है कि हममें बहुत सी बातों की कमी हो और कभी कभी शायद हम में बुद्धि का भी अभाव हो, परन्तु मैं समझता हूं कि हम में अपने विचारों को स्पष्ट रूप से या बिना किसी भय के प्रकट करने के साहस की कमी नहीं है। मेरा यह मत है कि अन्य देशों के लोगों की अपेक्षा भारत के लोगों में इस भय की भावना कहीं कम है।

हमने जिस नीति को अपनाया है वह हमारे विगत इतिहास, विगत परम्पराओं और विगत विचार-धारा के परिणामस्वरूप ऐसी है। यह एक ऐसी नीति है जिसे हम आदर्शवादी आधार पर और व्यावहारिक दृष्टिकोण दोनों से उचित ठहरा सकते हैं। हम घृणा, हिंसा और भय के इस वातावरण में जो शीत-युद्ध के कारण फैला हुआ है, घुसना नहीं चाहते। जहां तक संभव है, हम नहीं चाहते कि जो देश इसके बाहर हैं वे इसमें शामिल हों क्योंकि समस्यायें इतनी जटिल हैं कि ऐसा करने से जिस शान्ति को हम चाहते हैं उसे स्थापित नहीं किया जा सकता। परन्तु, जो कुछ भी हो, दो बातें की जानी चाहियें: एक तो ऐसी कोई बात न की जाये जिससे देशों के बीच जो तनाव है और जो डर है उसमें वृद्धि हो। दूसरी चीज़ यह है कि इस खिंचाव को कम करने के लिये प्रयत्न किया जाये। यदि कोई ऐसा कदम उठाया जाता है जिससे लोगों का भय और अधिक हो जाता है तो इससे शान्ति भंग होने की संभावना बढ़ जाती है।

इस लिए इस सम्बन्ध में हमें विश्व में अपना कर्तव्य करना है और बिना भय के तथा विश्वासपूर्ण उत्साह के साथ कार्य करना है। इसके साथ ही सब देशों के प्रति मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखने का यह अभिप्राय नहीं कि हम अन्य देशों के विचारों और कार्यों से सहमत हैं, वरन् हमारे अपने विचार हैं। परन्तु मेरा यह निश्चय है और मैं विश्वास करता हूं कि इस विषय में सभा भी मुझ से सहमत होगी कि किसी भी समय और विशेषतः वर्तमान काल में यदि आप अपनी राय प्रकट करना चाहें जिसमें आप किसी अन्य देश की निन्दा करें, और भले ही आप समझते हों कि आपका विचार ठीक है, उसे प्रकट करना सहायक नहीं होगा। क्योंकि उससे केवल द्वेषभाव बढ़ता है और जब लोगों पर क्रोध और द्वेष का इतना अधिक प्रभाव हो तो वह तर्क अथवा न्यायसंगत युक्ति को सुनने के लिए तैयार नहीं होते।

जहां तक भारत का सम्बन्ध है हम विदेशी समस्याओं में फंसना नहीं चाहते। निस्संदेह हम इससे सर्वथा बच निकलने की आशा नहीं कर सकते क्योंकि हमने विश्व में अपना उत्तरदायित्व निभाना है और भारत ही क्या, कोई भी देश चाहे वह संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य हो अथवा न हो अलग नहीं

रह सकता। परन्तु हमारा अपने पड़ोसी देशों के साथ विशेष सम्बन्ध है और स्वभावतः हम चाहते हैं कि जहां तक हो सके इन पड़ोसी देशों के साथ हमारा सम्बन्ध गहरा और प्रेमपूर्ण हो। मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता होती है कि सिवाय एक देश के शेष सब के साथ हमारे सम्बन्ध ऐसे ही हैं। जहां तक बर्मा का सम्बन्ध है उसके साथ हमारे सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण हैं। इस समय बर्मा सरकार के साथ दोनों देशों के बीच कतिपय समस्याओं और विषयों के सम्बन्ध में बातचीत हो रही है और मुझे तनिक भी संदेह नहीं कि इस बातचीत के फलस्वरूप संतोषजनक समझौता हो जायेगा। जहां तक लंका का सम्बन्ध है कई माननीय सदस्यों ने हाल के भारत-लंका करार की ओर निर्देश किया है, अंशतः इसकी आलोचना की है और अंशतः उन्होंने अनुभव किया है कि इसकी कुछ बातों से बुरे परिणाम निकल सकते हैं। वस्तुतः जैसा मैंने पहले बताया है, लंका में भारतीय उद्भव के लोगों के सम्बन्ध में भारत लंका करार से समस्या का पूर्ण रूप से निबटारा नहीं हो जाता, वरन् यह उसकी ओर प्रथम पग है। वस्तुतः इससे वास्तविक स्थिति स्पष्ट हो गई है और इसमें मैत्रीपूर्ण, अच्छे तथा सहयोगी ढंग से स्थिति का वर्णन मात्र ही किया गया है। यह पूर्णतः स्पष्ट है कि समस्या के हल के लिए दोनों सरकारों में सहयोग, उनकी सद्भावना और सम्बन्धित लोगों की सद्भावना परमावश्यक है। अतः यदि इस करार से सद्भावना तथा सहयोगपूर्ण प्रयत्न का वातावरण उत्पन्न हो जाए तो हमने बहुत कुछ प्राप्त कर लिया। क्या इसमें हम अपने किसी अत्यावश्यक सिद्धान्त से टले हैं? मेरा निवेदन है कि ऐसा नहीं हुआ। मैं इस सम्बन्ध में विस्तृत बातों में नहीं जाऊंगा। यह सच है कि लंका में कुछ स्थानों पर इस की कई प्रकार की परिभाषाएं की गई हैं जिनमें करार के प्रयोजन को बढ़ा चढ़ा कर कहा गया है। स्पष्टतया हमारे ऊपर उन परिभाषाओं का बन्धन नहीं है जिन से हम सहमत नहीं और जिनका वस्तुतः करार से सम्बन्ध नहीं है। मुख्य बात यह है कि कई वर्षों के पश्चात् हमने इस प्रश्न को एक भिन्न ढंग से सुलझाने का प्रयास किया है, यह मैत्रीपूर्ण ढंग है और मुझे आशा है कि इसका परिणाम अच्छा होगा।

सदन को ज्ञात है कि कुछ समय अर्थात् एक मास अथवा उससे अधिक समय पहले तिब्बत पर प्रभाव डालने वाले कतिपय विषयों के सम्बन्ध में हमारे प्रतिनिधियों और चीन की जनवादी सरकार के प्रतिनिधियों के बीच पीकिंग में बातचीत हो रही थी। यह बातचीत अब भी हो रही है। यह बातचीत संतोषजनक ढंग से चल रही है और मुझे आशा है कि शीघ्र ही उसका भी संतोषजनक परिणाम होगा।

अतः इन पड़ौसी देशों के साथ हमारे सम्बन्ध अच्छे हैं। पश्चिमी एशिया के देशों और मिस्र के साथ सम्बन्ध बहुत अच्छे हैं। यह दुर्भाग्य है कि पाकिस्तान के साथ—जो न केवल हमारा समीपस्थ पड़ोसी है वरन् गत इतिहास, संस्कृति, परम्परा और अन्य सब प्रकार के बंधनों से किसी अन्य देश की अपेक्षा हमसे अधिक बंधा हुआ है—कुछ ऐसी समस्याएं बिना हल हुये पड़ी हैं जिनका हमारे सम्बन्धों पर दुष्प्रभाव पड़ा है।

जहां तक नहरों के पानी की समस्या का सम्बन्ध है वाशिंगटन में दोनों दलों के प्रतिनिधियों के बीच बातचीत चल रही है। मुझे विश्वास है कि उसमें पर्याप्त प्रगति हुई है परन्तु मैं केवल इतना ही कह सकता हूं। मैं नहीं जानता कि अन्तिम परिणाम क्या होगा। निष्क्रान्त सम्पत्ति जैसी अन्य समस्याएं अभी पड़ी हैं और कुछ समय से इन विषयों के सम्बन्ध में हमें बहुत निराशा हुई है। बड़ी

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

समस्या काश्मीर की है। मैं इस विषय के सम्बन्ध में कुछ देर बाद बोलूंगा, और पाकिस्तान के सम्बन्ध में जो कुछ नई घटनाएं हुई हैं उनकी ओर निर्देश करूंगा।

मैंने विदेशी मामलों का निर्देश किया है। परन्तु स्वाभाविक ही है कि हमारे लिए महत्वपूर्ण बात हमारी घरेलू स्थिति है और जो आर्थिक प्रगति हम कर सकेंगे अथवा करना चाहते हैं वह एक महत्वपूर्ण पहलू है। आप इसकी जांच उत्पादन, प्रति व्यक्ति उपभोग तथा बेकारी में कमी, जिसे भी ठीक समझें उसके आधार पर कर सकते हैं क्योंकि वे सब बातें साथ साथ चलती हैं। अब इन विषयों पर पूर्णतः विचार करने के लिए समय नहीं हैं। परन्तु मैं यह बात सानुरोध कह देना चाहता हूं कि इन विभिन्न समस्याओं में से जो हमारे सामने हैं, यह समस्या सब से बड़ी और महत्वपूर्ण है। मैं अपने उत्तर में जो इस पर विस्तारपूर्वक चर्चा नहीं करना चाहता, तो इसका यह अभिप्राय नहीं कि हमारी सरकार इसे कम महत्व की समस्या समझती है, परन्तु इस पर इस उखड़े पुखड़े ढंग से विचार नहीं किया जा सकता। जब कभी भी इसके लिए समय मिले इस के किसी पहलू पर पूर्णतः चर्चा करने के लिए मैं सभा का स्वागत करूंगा।

परन्तु मैं चाहता हूं कि माननीय सदस्य इस पहलू पर निष्पक्ष विचार करें। विरोधी पक्ष का यह अधिकार और कर्त्तव्य है कि वे आलोचना करें। मैं इसे स्वीकार करता हूं और इसे पसन्द करता हूं। यदि आलोचना न हो तो किसी भी सरकार में आलस्य आ जाने की सम्भावना है। और इस समस्या पर निष्पक्ष विचार करने के लिए मैं इस इच्छा से नहीं कह रहा हूं कि विरोधी पक्ष की आलोचना कम हो जाये। भारत जैसे बड़े देश में जो कठिन स्थिति में से गुजर रहा है और जिस के समक्ष कठिन समस्याएं हैं, आलोचना करना तथा त्रुटि निकालना बहुत सुगम है, और हो सकता है कि वह आलोचना युक्ति-संगत हो और बताई गई त्रुटियां भी विद्यमान हों। उसके साथ ही आप को ऐसी बातें मिलेंगी जो श्लाघनीय हों, प्रशंसनीय हों और जिनकी सराहना की जा सके, दोनों प्रकार की बातें हैं और भारत जैसे देश में आप उन दोनों में से किसी की भी लम्बी सूची तैयार कर सकते हैं। अन्ततः यह देखना है कि क्या हम एक विशेष दिशा की ओर बढ़ रहे हैं अथवा नहीं और क्या वह दिशा ठीक भी है अथवा नहीं। यदि मै आज के भारत को अन्वेषणा यात्रा पर कुछ सदस्यों को ले जा सकूं तो मुझे इस बात में संदेह नहीं कि वे मुझे कई ऐसी चीज़ें दिखा सकेंगे जिनका मुझे ज्ञान नहीं, परन्तु मैं भी उन्हें कई ऐसी चीज़ें दिखा सकूंगा जिनके सम्बन्ध में उन्होंने भले ही समाचार पत्रों में पढ़ा हो परन्तु उन्हें पूरा ज्ञान नहीं होगा। तो भी जब हम अपने सामने वस्तुतः व्यवहार रूप में कुछ बातें देखते हैं और केवल कुछ पढ़ लेने की बजाय जब हमें स्वयं देखकर घटनाओं का भावनापूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है तो उसमें कुछ अन्तर रहता है, क्योंकि मैं भारत में घूमता हूं और देखता हूं कि उन विशाल उपक्रमों पर कैसे काम हो रहा है-जिनका फल शीघ्र निकलेगा, और यह भी देखता हूं कि छोटे कार्यों के सम्बन्ध में हमारे लोग स्वयं क्या कर रहे हैं। यह सरकार का प्रयास नहीं है यह वह कार्य है जो लोग कर रहे हैं चाहे उन्हें सरकार की सहायता मिलती हो। मुझ में उत्साह भर जाता है। हृदय में एक प्रसन्नता की लहर दौड़ जाती है। मैं स्पष्ट कर दूं कि यह मैं सरकार की प्रशंसा नहीं कर रहा हूं जिससे कि मेरा सम्बन्ध है, यद्यपि मैं समझता हूं कि कई विषयों में सरकार ने

बहुत अच्छा काम किया है। मैं इस दृष्टि से विचार नहीं कर रहा कि सरकार ऐसा कर रही है वरन् मैं इस बात पर विचार कर रहा हूं कि भारत के लोग क्या कर रहे हैं। यह देख कर मुझे गर्व होता है कि नये भारत के निर्माण में जिसके लिये हम प्रयत्न कर रहे हैं हमारे लाखों देशवासी स्त्रियां और पुरुष काम कर रहे हैं। इसका नवनिर्माण हो रहा है। मुझे इसमें संदेह नहीं कि यह नवनिर्माण न केवल बड़े स्थानों पर होना है जिनके सम्बन्ध में आप समाचार पत्रों में पढ़ते हैं वरन् आज के भारत के हज़ारों गांवों में होना है और मुझे आशा है कि एक दो वर्ष में ही वे हज़ारों गांवों हज़ारों नहीं रहेंगे वरन् उनकी संख्या लाखों की हो जाएगी। इस नव निर्माण के कठिन कार्य के साथ साथ एक नए भारत की रूप रेखा बन रही है और मुझे अनुभव होता है कि हमारा प्राचीन इतिहास इस बात का साक्षी होगा कि हमारे इस प्राचीन भारत में, जिसने नया रूप धारण कर लिया है, क्या हो रहा है। यह एक महान् साहस का कार्य है जिसमें हम सब लगे हुए हैं और जब मैं इसकी ओर देखता हूं तो मैं विचार करता हूं कि यह ऐसा कार्य नहीं जिसके लिए मेरी सरकार उत्तरदायी है अथवा वह दल उत्तरदायी है जिससे मेरा सम्बन्ध है वरन् यह एक ऐसा कार्य है जिसके लिए इस सदन में बैठे हुए हम सब लोग और भारत की सारी जनता कुछ हद तक उत्तरदायी हैं। इसलिए मैं माननीय सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि वे इस ढंग से इस पर विचार करें। मैं नहीं चाहता कि वह आलोचना अथवा निन्दा करना कम करें। आलोचना करना ठीक है और लोकतंत्रात्मक ढंग के अनुकूल है, मैं इसका स्वागत करता हूं। परन्तु मैं समझता हूं कि यह दुर्भाग्य है कि विरोधी पक्ष के माननीय सदस्य प्रायः सरकार की आलोचना करते हुए भारत के लोगों की भी आलोचना करते हैं........

श्री एस० एस० मोरे (शोलापुर) : बिल्कुल नहीं।

श्री जवाहरलाल नेहरू :...और यह नहीं समझते कि वास्तव में भारत की जनता ही आज काम चला रही है।

श्री एस० एस० मोरे : नहीं, श्रीमान्।

श्री जवाहरलाल नेहरू : कुछ माननीय सदस्य इस बात को न मान कर केवल यही जतलाते हैं कि वे भारत की जनता से कुछ दूर से हैं। मैं यह नहीं कहता कि सरकार का तरीका ही सर्वोत्तम तरीका है। हो सकता है कि यह अधिक अच्छा तरीका हो। वर्तमान सरकार अच्छा तरीका अपना सकती है या कोई दूसरी सरकार अच्छा तरीका अपना सकती है, और दोनों के बीच पर्याप्त अन्तर हो सकता है। परन्तु मूल बात यह है कि जो कुछ काम भारत में हो रहा है वह किसी भी सरकार को करना पड़ता और यह काम भारत की जनता कर रही है। यह एक महत्वपूर्ण बात है और दूसरे अवसर पर मैं इस पर फिर बोलूंगा।

महत्व की बात यह है कि हमें जनता के साथ साथ चलना चाहिये। मेरे माननीय मित्र, डा० जयसूर्य, ने मेरे बारे में, मेरी आधुनिक विचार प्रणाली आदि के बारे में कुछ सराहनात्मक शब्द कहने की कृपा की। मुझ में कितनी कुछ आधुनिकता है, इस बात पर हम फ़ुर्सत से चर्चा कर सकते हैं। परन्तु एक बात की मुझे पूरी चेतना है, और वह यह कि एक सुखद भविष्य की ओर आगे बढ़ते हुये हमें ३६ करोड़ लोगों के साथ साथ चलना है। मुझ में आधुनिकता होने अथवा और किसी में पुराणप्रियता अथवा प्रतिक्रियात्मक प्रवृत्ति होने का इतना कोई महत्व नहीं है। महत्वपूर्ण बात यह है कि यह याद रखते हुये कि प्रगति की ओर हमारी इस यात्रा में करोड़ों लोग हमारे साथ हैं, हमें उनके साथ साथ चलना है और

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

उन्हें अपने साथ साथ चलाना है। हमें चाहिये कि हम अपने को जनता से अलग न रखें और हमारी यह धारणा न रहे कि हम श्रेष्ठ हैं और जनता हमारे से बहुत नीची है। हो सकता है कि हम बौद्धिक दृष्टि से साधारण जनता से उच्च हों। परन्तु एक सुखद भविष्य की ओर जो यह यात्रा है यह भारत की जनता की है और कुछ व्यक्तियों अथवा वर्गों की नहीं जो कि अपने को उच्च समझते हों।

इस यात्रा में हमें जनता को विश्वास दिलाना है और अपने साथ साथ चलाना है। ऐसा करने की रीति क्या है ? वही लोकतन्त्रात्मक प्रणाली जो हमने अपनाई है। इस लोकतन्त्रात्मक रीति के अतिरिक्त हमने अपने स्वतन्त्रता संघर्ष में शान्तिपूर्ण रीति अपनाई। वास्तव में, सामान्यतः लोकतन्त्रात्मक तथा शान्तिपूर्ण रीतियां एक साथ चलाई जाती हैं।

श्री नम्बियार (मयूरम) : अहिंसात्मक ढंग से।

श्री जवाहरलाल नेहरू : मेरी धारणा है कि माननीय सदस्य को शान्तिपूर्ण तरीके पसन्द नहीं हैं। कुछ बुनियादी कामों को यदि शान्तिपूर्ण तथा प्रजातन्त्रात्मक तरीकों से करना हो तो बहुत कुछ काम किया जा सकता है। अन्यथा हम अधिक कार्य न कर सकेंगे। मैं इस समय आर्थिक सिद्धान्तों की बात नहीं कर रहा हूं, चाहे वे कुछ भी हों और न मैं और व्यापक विश्व की ही बात कर रहा हूं। मैं अपने भारत देश से थोड़ा बहुत परिचित हूं। अन्य देशों को अंदरूनी अथवा बाहरी मामलों में, क्या करना चाहिये, इस सम्बन्ध में परामर्श देने का मैं कोई दावा नहीं करता हूं। परन्तु भारत की दशा जैसी है उस पर विचार करते हुए मुझे पूरा विश्वास है कि शान्तिपूर्ण तरीक़ों का प्रयोग न करने पर परिणाम बहुत भयंकर हो सकते हैं। यदि आप भारत की एकता को समाप्त कर दें तो आपके प्रगति के सभी प्रयास व्यर्थ हो जायेंगे। मैं इन दोनों बातों को अलग रखना चाहता हूं। मैं विरोधी दलों के माननीय सदस्यों से अपील करता हूं कि ऐसे महान् कार्यों में वे दिल खोल कर सहयोग दें। उन्हें चाहिये कि ऐसा करने में वे अपनी ऊपरी विशेष नीतियों तथा दृष्टिकोणों को स्थान न दें। मैं इसका विरोध नहीं करता हूं कि उन्हें अपने विचार प्रकट करने की, हमारी आलोचना करने की तथा हमारी निन्दा करने की पूरी स्वतन्त्रता है। यदि सरकार में दोष हैं, सरकार का स्तर इतना ऊंचा नहीं है जो आपको सन्तोष दे सके तो आप निस्सन्देह सरकार की आलोचना कीजिये परन्तु जो सरकार भारत की जनता का प्रतिनिधित्व करती है, उसके सदस्य कितने ही तुच्छ क्यों न हों, उन्होंने कितनी ही भूलें क्यों न की हों, फिर भी केवल इस कारण कि वे भारतीय जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं उस जनता की महानता का कुछ न कुछ अंश इस सरकार में अवश्य पाया जायेगा। इसलिये मैं माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे भारत के इस महान् साहसिक कार्य की ओर देखें। यह एक प्रयोग भी है तथा साथ ही साथ, एशिया के तथा अन्य स्थानों के, हमारे बहुत से देशों के लिये, यह युद्ध की सम्भावनाओं तथा आर्थिक कठिनाइयों के मुकाबले में अस्तित्व का संघर्ष भी है। हमें इस महान् संघर्ष का सामना करना है और विजय प्राप्त करनी है। हम विजय की ओर अग्रसर हो रहे हैं। तब कोई कारण नहीं है कि हम अपनी इच्छा पर आलोचना करते हुए तथा अपनी अलग अलग नीतियों पर दृढ़ रहते हुए, जनतंत्रात्मक तथा शान्तिपूर्ण ढंग से, इस संघर्ष का सामना करने के लिये, एक समान आधार क्यों न ढूंढ निकालें ? मेरा आशय यह

नहीं है कि कोई व्यक्ति तथा दल अपना दृष्टिकोण त्याग दे । प्रत्येक दृष्टिकोण—यहां तक कि वे दृष्टिकोण भी जिनसे हो सकता है कि मैं पूर्ण रूप से असहमत हूं—पूरी तरह से व्यक्त किया जाना चाहिये ।

कुछ माननीय सदस्यों ने उस प्रस्तावित सैनिक सहायता के सम्बन्ध में कहा है जो सम्भवतः अमरीका द्वारा पाकिस्तान को दी जा सकती है तथा इससे उत्पन्न होने वाले परिणामों के सम्बन्ध में भी कहा है । उन्होंने प्रश्न उठाया है कि सरकार ने या मैंने इस विषय में उनसे सलाह क्यों नहीं ली । हम सब एक हो कर काम करते । निस्सन्देह मैं चाहता भी यही हूं कि हम सब, राष्ट्र से सम्बन्ध रखने वाले किसी गम्भीर विषय में, एक होकर काम करें । इतना ही नहीं मैं तो यहां तक चाहता हूं कि अन्य बातों में भी हम अधिक से अधिक एकता से कार्य कर सकें । जहां तक मेरा सम्बन्ध है, ऐसे अवसरों पर, मुझे सदन के अथवा सदन के किसी भी दल के किसी भी सदस्य से, परामर्श करने में प्रसन्नता होगी । परन्तु किसी भी संयुक्त नीति के लिये यह आवश्यक है कि वह दृष्टिकोण की मूल एकता पर आधारित हो । यदि उसका मूल ही वैपरीत्य होगा तो उसके आधार पर एकता का ढांचा खड़ा करना या किसी संयुक्त नीति के अनुसार काम करना कठिन है । यदि इस सदन के कुछ सदस्य हम से कहते हैं कि हमारी वैदेशिक नीति सर्वथा भ्रान्तिपूर्ण तथा मार्गभ्रष्ट हैं, हमें इसका परित्याग कर कुछ और करना चाहिये तो निश्चय ही किसी प्रकार की दृष्टिकोण की एकता नहीं रह जाती है क्योंकि यह नीति केवल दावपेंच का उलट फेर नहीं है वरन् हमारे विकास, हमारे आन्दोलन, हमारी विचारधारा तथा अन्य बहुत सी बातों पर आधारित है । और मेरे विवेकानुसार तो उस नीति के परिणाम बहुत अच्छे हुए हैं । हो सकता है माननीय सदस्यों को मेरा विचार मान्य न हो । कुछ न कुछ इस प्रकार की दृष्टिकोण की एकता होना आवश्यक है ।

यदि मैं आलोचना करता हूं और अनुभव करता हूं कि यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि अमरीका पाकिस्तान को सैनिक सहायता देगा तो कोई माननीय सदस्य उठ खड़े होते हैं और कहते हैं : हम भी अमरीका से सैनिक सहायता क्यों नहीं लेते हैं ? इससे प्रकट होता है कि या तो हमारा दुर्भाग्य यह है कि हम अपनी नीति को इतनी भली प्रकार से स्पष्ट नहीं कर पाये जिससे वे उसका आशय ठीक ठीक समझ पाते अथवा उनका विचार है कि हमारी नीति बिल्कुल ग़लत है क्योंकि यदि मैं समझता हूं कि भारत के प्रश्न को अलग रखते हुए भी, एशिया के दृष्टिकोण से तथा और कई विचारों से पाकिस्तान को सैनिक सहायता देना ठीक नहीं है और यदि हम वही ग़लती करें तो हमारा सत्यानाश निश्चित है । उसके बाद हमारे पास किसी भी नीति का औचित्य नहीं रहेगा । इसलिये हमारे दिमाग़ में इस सम्बन्ध में कोई भ्रम नहीं रहना चाहिये । या कोई और परामर्श देगा : "अमरीका ने ऐसा किया है इसलिये रूस के पास भागो और उससे सैनिक सहायता प्राप्त करो ।" यह सारी बातें किसी विकृत विचारधारा पर आधारित हैं । हम जिस मौलिक नीति का अनुसरण कर रहे हैं उसके यह पूर्ण रूप से विरुद्ध है । किसी भी बाहरी देश की सहायता लेने पर—मैं इसके गुण दोषों का वर्णन नहीं करना चाहता—हमारी सारी नीति खतम हो जाती है और हमको फिर से विचार करना होगा कि इस सम्बन्ध में हमें क्या करना चाहिये । इसलिये मेरा विचार है कि किसी न किसी प्रकार की दृष्टिकोण की एकता होना बहुत आवश्यक है ।

इसके अलावा मेरा निवेदन है कि कुछ ऐसी बुनियादी बातें हैं जिनका अवश्य ही ध्यान रखना चाहिये । यदि हमें शान्तिपूर्ण

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

तथा जनतन्त्रात्मक तरीकों से काम करना है तो हमारे संविधान के अनुसार, सत्ता संसद् के हाथ में है, सब दलों से ऊपर, हमारा राष्ट्रपति राज्य का प्रतीक है तथा और भी अनेक बातें हैं। यह हो सकता है कि वे, राष्ट्रपति के रूप में, अपने अभिभाषण में यही बताते ही कि सरकार क्या करना चाहती है। यह बात और है। परन्तु वे राज्य के प्रतीक हैं। हमारा एक झण्डा है। हमारा एक राष्ट्र गीत है। मैं बहुत मोटी मोटी बातें बता रहा हूं। मैं जो कुछ कह रहा हूं वह शिकायत के रूप में नहीं वरन् दुःख से कह रहा हूं। मुझे इस बात का बड़ा दुःख है कि इस सत्र के आरम्भ होने पर, जब राष्ट्रपति ने सदन के दोनों सदनों के संयुक्त सत्र के सामने अपना अभिभाषण पढ़ा तो कुछ माननीय सदस्य जान बूझ कर तथा गर्व से सम्मिलित नहीं हुए। मैं इस के गुण दोष नहीं बता रहा हूं। फिर भी राष्ट्रपति राज्य का तथा राज्य के सम्मान का एक प्रतीक हैं। केबल इतना ही नहीं वरन् हमारे कुछ राज्य विधान मण्डलों में भी यही कार्य राज्यपाल द्वारा किया जा रहा है। राज्यपाल भी इसी प्रकार एक प्रतीक के रूप में हैं। इसकी कोई बात नहीं कि चाहे आप राज्यपाल को पसन्द करें या न करें, चाहे वह देखने में सुन्दर हो या इतना आकर्षक न हो। ये तो राज्य की एकता के प्रतीक होते हैं। और यदि हम उस प्रतीक का आदर न करें तो इस से राज्य की एकता के विचार को आघात पहुंचता है। यदि एक दल ऐसा करता है और दूसरा भी ऐसा ही करता है तो किसी न किसी गुट के लिये ऐसा करने की प्रथा ही चल पड़ेगी क्योंकि उन्हें कुछ न कुछ पसन्द नहीं होगा। मैं न केवल यहां के माननीय सदस्यों से अपितु अन्यत्र के सदस्यों से भी यह अनुरोध करूंगा कि इन अभिसमयों का पालन किया जाना चाहिये। ऐसी प्रथा क्यों है—जोकि हमने अन्य संसदों, विशेष रूप से ब्रिटिश संसद् से ली है—कि मैं "विरोधी पक्ष के माननीय सदस्य" या "विद्वान् सदस्य" या "मेरे विद्वान् सहयोगी" कहूं? ये सब प्रथायें हैं। जब मैं "विद्वान् सदस्य" कहता हूं तो इस का यह अर्थ नहीं कि वह बहुत विद्वान् हैं। परन्तु ये तो केवल शिष्टता प्रदर्शित करने के लिये कुछ प्रथायें हैं। इन शब्दों के प्रयोग करने से हमारा आचरण उचित और गौरवपूर्ण बना रहता है। हम भारत की संसद् हैं और हमारी स्थिति बहुत गौरवमय है। हमारे लिये औरों के समक्ष आदर्श रखना उचित ही है।

मैं आर्थिक स्थिति के सम्बंध में अधिक नहीं कहूंगा, किन्तु अपनी ओर से तथा अपनी सरकार की ओर से इतना अवश्य कहूंगा कि हम आर्थिक विषयों पर किसी सिद्धान्त या पहले से नियत विचारधारा के अनुसार विचार नहीं करते अपितु बिल्कुल खुले दिमाग से विचार करते हैं। हम अपनी पंचवर्षीय योजना या दूसरी पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में किसी से भी किसी भी बात पर विचार करने को और किसी भी चीज़ को बदलने को और यदि हमें विश्वास हो जाये तो किसी भी बात को मानने के लिये तैयार हैं। क्योंकि यह एक कठिन समस्या है और मुझे आशा है कि सदन इस बात से सहमत होगा कि इसे सरलता से हल नहीं किया जा सकता। चाहे हम किसी भी नीति को अपनायें यदि हम कठोर परिश्रम करेंगे और एकता बनाये रखेंगे तो हमें सफलता अवश्य मिलेगी। हो सकता है हम अब जो तरीके अपना रहे हैं उन की अपेक्षा यदि कुछ और ढंग अपनायें तो सम्भवतः अधिक अच्छे परिणाम हो सकें। हमें इस पर विचार करना चाहिये। हम हर चीज़ पर विचार करने को तैयार हैं।

एक माननीय सदस्य ने हमारी प्रशासन व्यवस्था के सम्बन्ध में कुछ कहा था और मेरे उद्धरण दिये थे। हम इस पर विचार कर रहे

हैं और मुझे आशा है कि हम इस में इस प्रकार से सुधार कर लेंगे। किन्तु मैं यह कहना चाहूंगा—क्योंकि प्रशासन की आलोचना की गई थी—कि आलोचना करना और कहीं कहीं भूलचूक बताना बड़ा सरल है। तथापि, मैं समझता हूं कि हमारी प्रशासन व्यवस्था ने काफी हद तक अपने आपको वर्तमान परिस्थितियों के अनुकूल बना लिया है और बना रही है और इसमें हमें पर्याप्त सफलता भी मिली है और हमारी प्रशासन व्यवस्था सम्पूर्ण रूप से या यों कहिये कि इसके कर्मचारी उतने ही अच्छे हैं जितने कि आप को किसी अन्य देश में मिल सकते हैं। स्वाभाविकतया मैं सब की बात नहीं कर रहा हूं, क्योंकि इनकी संख्या हजारों में है इसलिये मैं सब के बारे में नहीं कह सकता, कुछ लोग बहुत अच्छे हैं, कुछ अच्छे हैं और कुछ औसत दर्जे के हैं। परन्तु सामान्यतया ऐसी ही बात है और मैं यह अपने अन्य देशों के कुछ ज्ञान के आधार पर कह रहा हूं। किन्तु फिर भी हमें इसे सुधारना है और बदलती हुई परिस्थितियों के अनुकूल बनाना है। एक माननीय सदस्य ने हमारी सेवाओं के पुराने नियमों और विनियमों और इस सम्बन्ध में कि हमारे प्रशासन को किस प्रकार कार्य करना चाहिये जो कुछ कहा था मैं उनकी बातों से पूर्णतया सहमत हूं। मैं इस बात से पूर्णतया सहमत हूं कि इस सब को बदलना चाहिये। वास्तव में इस समय हम यही करने में लगे हुए हैं और मुझे आशा है कि थोड़े समय में ही यह कार्य पूरा हो जायेगा। इसकी बनावट बड़ी जटिल है और इन चीजों को बदलना इतना सरल नहीं है, क्योंकि एक परिवर्तन करने से दूसरा परिवर्तन भी हो जायेगा। खैर, मेरा सदन से यह निवेदन है कि इस समय इसकी बहुत सी आलोचना की जा सकती है। मैं अपनी ही सरकार की आलोचना करता हूं। और कई बार करता हूं। मुझे इसका कोई कारण भी दिखाई नहीं देता कि मैं ऐसा क्यों न करूं। परन्तु मेरी आलोचना में और सम्भवतः औरों की आलोचना में अन्तर है। मैं मित्रभाव से आलोचना करता हूं—यह आलोचना वास्तव में प्रायः क्रोधपूर्ण शब्दों में व्यक्त होती है—क्योंकि यह हमारे सहयोगियों की आपस की बात है। परन्तु हम इसे सुधारना चाहते हैं। इसमें हम सभी की सहायता चाहते हैं। इन महत्वपूर्ण परिवर्तनों के पश्चात् और विशेष रूप से आज की विश्व स्थिति को ध्यान में रखते हुए भारत पर शासन करने का कार्य एक बहुत बड़ा काम है। मेरा नम्र निवेदन है कि मेरे विचार में हमारी सब असफलताओं के बावजूद भी हमारा काम अच्छा ही हो रहा है। हो सकता है और कोई इससे अधिक अच्छा कर सकता। परन्तु हमें इस विषय पर आर्थिक, प्रशासनात्मक तथा हर दृष्टिकोण से विचार करना चाहिये जिससे कि हम इसे चलाने का कोई अच्छा ढंग निकाल सकें और उस अच्छे ढंग को अपनाना चाहिये।

अब मैं पाकिस्तान को प्रस्तावित अमरीकी सहायता के सम्बन्ध में भी कुछ कहना चाहूंगा। सदन को ज्ञात है कि हाल ही में तुर्की और पाकिस्तान के मध्य एक समझौता हुआ है और यह कहा जाता है कि इसके पश्चात् संयुक्त राज्य अमेरिका और पाकिस्तान के मध्य सैनिक सहायता के लिये कोई व्यवस्था होगी। मैंने गत दिसम्बर में सदन की बैठक स्थगित होने से पूर्व इसके विषय में कहा था और इसके सम्बन्ध में चिन्ता प्रकट की थी। इस चिन्ता का कारण यह नहीं था कि पाकिस्तान के विरुद्ध तथा अमरीका के विरुद्ध हमारे अंदर कोई विद्वेष का भाव था। परन्तु मुझे उस समय अनुभव हुआ था, तथा उस समय से मैंने बराबर अनुभव किया है, कि यह एक बिल्कुल ग़लत क़दम है। इस प्रकार संसार में भय तथा तनातनी बढ़ेगी। ऐसे कार्य का औचित्य यदि सिद्ध भी करने का प्रयत्न किया जाता है तो वह भी इसी आधार

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

पर कि इसके द्वारा शान्ति स्थापित की जायेगी तथा सुरक्षा का विश्वास उत्पन्न होगा। मैं यह मानने को तैयार हूं कि जो लोग ऐसे कार्य के समर्थक हैं उनमें भी यही भावना है। परन्तु मुझे पूरा विश्वास है कि संसार अथवा एशिया की सुरक्षा को सुदृढ़ बनाने के स्थान पर, ऐसे कार्यों से एशिया में तथा संसार के अन्य भागों में तनातनी बढ़ेगी, भय और आशंका और अधिक हो जायेंगे तथा एशिया के लिये खतरा और अधिक हो जायेगा अस्तु शान्ति अथवा तनातनी को कम करने के दृष्टिकोण से ऐसा करना बहुत ग़लत होगा। सैनिक दष्टिकोण से ऐसा करना उचित हो सकता है मैं कह नहीं सकता क्योंकि मैं सैनिक तो हूं नहीं। मैं मानता हूं कि सैनिक बहुत अच्छे लोग हैं। सैनिकों का होना, कम से कम वर्तमान संसार में बहुत आवश्यक है। परन्तु सैनिकों के ही दृष्टिकोण से संसार की घटनाओं को देखने का प्रयत्न करना बहुत ही खतरनाक है। सुरक्षा के विषय में सैनिक का दृष्टिकोण अलग चीज़ है और राजनीतिज्ञ अथवा नीतिज्ञ का दृष्टिकोण भिन्न हो सकता है। उनमें एक सामंजस्य स्थापित करना है। जब युद्ध छिड़ता है तो सैनिक सर्वोपरि होता है, और बिल्कुल तो नहीं किन्तु करीब करीब उसी का बोलबाला रहता है। लेकिन जब शान्तिकाल में भी शासक की बागडोर सैनिकों के हाथ में आ जाती है तो शान्तिकाल के युद्धकाल में बदल जाने की सम्भावना बढ़ जाती है।

तब फिर किस प्रकार हम इसका संतुलन कर सकते हैं? इस प्रकार का यह माया जाल समस्त संसार में फैला हुआ है जो सच्चे और सही रास्ते पर जाने से हमें रोकता है; आर्थिक समस्याओं, गरीबी तथा अन्य सभी बातों को सुलझाने के लिए आज संसार के पास सभी शक्ति और साधन हैं। इतिहास में यह पहिला ही अवसर है जबकि इनको निपटाने के लिये संसार के पास शक्ति एवं अन्य सभी साधन मौजूद हैं। किन्तु ऐसा करने तथा सम्पूर्ण मानवता के लिए अच्छा भविष्य बनाने का कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व ही हमें युद्ध की तैयारियों एवं उसका डर और तनाव बना हुआ है और आशंका है कि कहीं युद्ध ही न हो जाय। यह बड़ी विचित्र बात है।

इन तनावों को हम किस प्रकार कम कर सकते हैं? सैनिक दृष्टि से सोच कर नहीं। मैं इस से सहमत हूं और स्वीकार करता हूं कि कोई भी देश सेना की उपेक्षा नहीं कर सकता। कोई भी देश अपने आपको कमज़ोर नहीं बना सकता और अपनी कमज़ोरी से दूसरे देशों को लाभ उठाने के लिए अपने आपको समर्पित नहीं कर सकता। कोई भी देश क्यों न हो इसे स्वीकार करने के बाद, यदि वह शान्ति का प्रयत्न करते हैं तो यह कार्य युद्ध की बात करके, धमकियां देकर, और सभी समय ज़ोर शोर से लड़ाई की तैयारियां करके नहीं हो सकता। जैसा कि मैंने पहिले भी कहा है और मैं विश्वास करता हूं तथा सहमत हूं कि जिस प्रकार मैं चाहता हूं, उसी प्रकार पाकिस्तान के प्रधान मंत्री भी यह चाहते हैं कि भारतवर्ष तथा पाकिस्तान में अच्छे सम्बन्ध होने चाहियें। इस मामले में उनके मन्तव्यों के सम्बन्ध में मुझे कोई भी सन्देह नहीं है और मैं आशा करता हूं कि उनको भी मेरे मन्तव्यों के सम्बन्ध में भी कोई सन्देह नहीं होगा। यह केवल मन्तव्यों का ही प्रश्न नहीं है। यदि कोई ऐसी कार्यवाही की जाती है जिसका परिणाम निश्चय ही हानिकारक होता है तो संसार के सभी सर्वश्रेष्ठ मन्तव्य उस दुष्परिणाम को नहीं टाल सकते। श्री मुहम्मद अली ने इस सम्बन्ध में बहुत से वक्तव्य दिये हैं। सर्वप्रथम उन्होंने कहा है कि "भारतवर्ष इसका विरोध क्यों

करता है ।" हालांकि उनका देश स्वतन्त्र है, मैं उन्हें रोक नहीं सकता । किन्तु यदि किसी चीज़ का समूचे एशिया पर और विशेषतः भारतवर्ष पर प्रभाव पड़ता है तो भला हम कैसे चुप रह सकते हैं यदि हमारे विचार से कोई चीज ऐसी है जो सैंकड़ों वर्षों के इतिहास को उलटती हो तो क्या हम चुप रहेंगे ? हमने अपने देशों को स्वतन्त्र करने की बात सोची है और विदेशी सैनिक बल को अपने यहां से हटाना ही उस स्वतन्त्रता का एक चिह्न है । हालांकि स्वतन्त्रता में फिर भी सम्भवतः कोई कमी रह सकती है किन्तु फिर भी सैनिक दलों का हटाना किसी प्रकार एक बाहरी चिह्न तो है । मेरा कहना है कि यूरोप के अथवा अमरीका के किसी भी देश से सैनिक सहायता या उसी प्रकार की वस्तु का लेना विदेशी सेनाओं को पुनः बुलाने जैसा है । काश्मीर के सम्बन्ध में दो अथवा तीन वर्ष पूर्व यह कहा गया था—और मेरा ध्यान है कि उस दिन भी किसी ने कहा था—कि यूरोप अथवा अमरीका के कुछ देशों की सेनाएं चाहे वे किसी भी प्रकार की सेनाएं क्यों न हों काश्मीर में रख दी जायं हमने इसे बिल्कुल अस्वीकार कर दिया क्योंकि किसी भी समय चाहे जो कुछ भी हो जाय हम विदेशी सेनाओं को भारत भूमि में पैर नहीं रखने देंगे । हमारा यह पक्का निर्णय है ।

यह हमारा दृष्टिकोण है जो भारतीय दृष्टिकोण से भी आगे बढ़ गया है । मैं कहता हूं कि यह वह दृष्टिकोण है जो समूचे एशिया महाद्वीप अथवा उसके बहुत बड़े भाग पर लागू होता है । अतः पाकिस्तान को दी जाने वाली अमरीकी सहायता को भी हम शंका तथा अफ़सोस की दृष्टि से देखते हैं । मुझे पूर्ण विश्वास है कि अमरीकी सरकार इस प्रश्न को इस दृष्टि से नहीं देखती वह तो अपने देश के वातावरण से देखती हैं अतः यही कठिनाई है । यूरोप की समस्याओं के बारे में जो दूर की समस्या है—मैं अपने विचार प्रकट करना नहीं चाहता । किन्तु अपने देश, अपने पड़ौसियों तथा एशियाई देशों के बारे में विचार प्रकट कर सकता हूं क्योंकि मैं उनको यूरोपीय तथा अमरीकियों से अधिक जानता हूं । इसका यह मतलब नहीं है कि भारतवर्ष अपने विचार तथा इच्छाएं दूसरे देशों पर थोपना चाहता है, हम किसी भी प्रकार की नेतागिरी के इच्छुक नहीं हैं, किन्तु भारत तथा उन सभी देशों का पिछले दो सौ अथवा तीन सौ वर्षों का एक सा इतिहास रहा है, क्योंकि हमारे अनुभव उन जैसे ही हैं अतः हम उनको अच्छी तरह जानते हैं । अतः मैं आज यदि कोई बात कहता हूं तो बहुत कुछ अंशों में वह बात मेरे पड़ौसियों की भी होगी क्योंकि हमारी सब की एक ही पृष्ठ-भमि तथा एक से ही अनुभव रहे हैं और हमारी समस्याएं भी एक सी ही रही हैं ।

अतः एशिया की समस्याओं का अब हल होना है और बड़े राष्ट्र इन समस्याओं को सुलझाने के लिए इच्छुक हैं किन्तु यदि वे समझते हैं कि एशिया की ये समस्याएं एशिया अथवा एशिया के देशों के विचारों के समर्थन के बिना स्वतः ही हल कर लेंगे तो वे गलती पर हैं ।

जैसा कि सदन भली भांति जानता है कि काश्मीर की संविधान सभा ने अभी हाल में उन संकल्पों तथा संविधान के उन भागों को पारित किया है जिन पर कि वह विचार कर रही थी । हमने इस बात को स्पष्ट कर दिया था कि काश्मीर की जनता को अपना संविधान बनाने का पूरा पूरा अधिकार है । और जहां तक इसके सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय वचनों की बात है हम उनका पूरा पूरा पालन करेंगे । संविधान सभा ने बहुत ही महत्वपूर्ण सत्य को स्वीकार किया है । वस्तुतः यह महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके द्वारा काश्मीर के निर्वाचित व्यक्तियों की इच्छा प्रकट की गई

[श्री जवाहरलाल नेहरू] 21

है । किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि जनमत अथवा किसी अन्य के प्रति किये गये हमारे अन्तर्राष्ट्रीय वचनों में यह रुकावट डालेगी । पाकिस्तान के विदेश मंत्री ने कहा है कि भारत में मिलने की काश्मीर संविधान सभा के विनिश्चय को मैं अस्वीकार कर दूं । यह बेहूदा मांग है ऐसा कैसे हो सकता है ? लेकिन हम इसके सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय वचनों का पालन करेंगे । अब चूंकि पाकिस्तान अमरीका से फौजी सहायता ले रहा है इसलिए सारी स्थिति बदल गई है । इस फौजी सहायता के बारे में कि वह क्या है, किस प्रकार की है तथा किस रूप में मिलेगी इसके बारे में अभी तक मैं नहीं जानता । इस समूचे प्रश्न के गुणावगुण को दृष्टिगत रख कर मैंने अपने विचार प्रकट किये हैं । यह इतनी बुरी बात है कि यह तो स्वतः ही इतिहास को उलटना है । श्री मुहम्मदअली ने कहा है कि यदि हमें अमरीका से यह सहायता मिल जायगी तो काश्मीर की समस्या हल करना सरल हो जायगा । इसके दो अर्थ हो सकते हैं—एक यह कि वह फौजी हमला कर काश्मीर की समस्या हल करना चाहते हैं या दूसरा यह कि वह दबाव डालना चाहते हैं । अतः इन दोनों बातों पर ध्यानपूर्वक विचार करना है ।

कुछ सदस्य कहते हैं कि हम काश्मीर के मामले को संयुक्त राष्ट्र संघ से वापस क्यों नहीं ले लेते । हम ऐसा नहीं करना चाहते क्यों कि भारत के वचनों की प्रतिष्ठा है । हम अन्तर्राष्ट्रीय वचनों का पालन करेंगे । पांच या छः वर्ष पूर्व क्या ठीक था या क्या गलत, इसके बारे में चर्चा करना अब उचित नहीं है । अब तो हमें इस वर्तमान स्थिति पर विचार करना है ।

अब मुझे कुम्भ मेले के विषय में कुछ कहना है जिस पर मेरे मित्र आचार्य कृपलानी ने कुछ कहा है । मैं कुम्भ मेले के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष तो कुछ नहीं कह रहा हूं, क्योंकि इसके लिये हमें जांच के परिणाम की प्रतीक्षा करनी चाहिये । परन्तु मैं एक बात कहना चाहूंगा, महान् आचार्य जी ने यह कहा था कि सरकार लोगों को मेले में आने के लिये निमंत्रित कर रही थी और प्रोत्साहित कर रही थी तथा उन्हें मेले में जाने के लिये धकेल रही थी क्योंकि हमने इस के लिये विशेष गाड़ियां चलाई थीं और इसी प्रकार की अन्य व्यवस्था की थी । मेरा यह निवेदन है कि वस्तुस्थिति यह नहीं है । जहां कहीं भी बहुत अधिक भीड़ होने की आशा होती है रेलवे उसके लिये व्यवस्था करती है—हमें ऐसा करना पड़ता है—और सत्य तो यह है कि लाखों लोग इस अवसर पर इसलिये नहीं आ सके क्योंकि रेलों में स्थान नहीं था । माननीय सदस्य ने यह कहा था कि लोग डिब्बों की छतों पर यात्रा कर रहे थे, विशेष रूप से मीटर लाइन के विभाग पर यही स्थिति थी । इससे यह पता लगता है कि रेलों में इतनी अधिक भीड़ थी कि लोगों को डिब्बों की छतों पर खड़े होकर यात्रा करनी पड़ी । इतनी अधिक भीड़ थी और रेलवे को यथासम्भव अच्छे से अच्छा प्रबन्ध करना पड़ा । मुझे अब भूल गया है दस वर्ष पूर्व हरिद्वार के कुम्भ के मेले के अवसर पर भी यही सब प्रबन्ध किये गये थे—मेरे विचार में ३०० या ४०० विशेष गाड़ियां चलाई गई थीं । यह करना पड़ता है ।

मैं इस विषय के दूसरे पहलू के सम्बन्ध में भी कुछ कहना चाहता हूं । एक यह आरोप लगाया गया था कि सरकार एक दल विशेष के लाभ के लिये इस मेले से अनुचित लाभ उठाना चाहती थी । मुझे यह सुन कर बड़ा आश्चर्य हुआ । मेरा यह दृष्टिकोण नहीं है और न ही उत्तर प्रदेश सरकार का यह दृष्टिकोण है । मैं यह कहना चाहता हूं कि जहां

तक मेरा सम्बन्ध है मैं अपने मित्र श्री पुरुषोत्तम दास टंडन की उन बातों से सहमत हूं जो कि उन्होंने अभी अभी कही हैं कि लोग समझते हैं और उनकी यह भावना है या देश की यह भावना है या किसी अन्य व्यक्ति की यह भावना है कि उनका ग्रहों, सूर्य या चन्द्रमा से सम्बन्ध है और वे गंगा में स्नान करके अपने पाप धो सकते हैं तथा इसी प्रकार की और बातें हैं। मैं किसी के विश्वास की आलोचना करना नहीं चाहता या उसे दुःख पहुंचाना नहीं चाहता, किन्तु इस सदन के बहुत से सदस्य जानते हैं कि मैं कभी ऐसा कोई अवसर अपने हाथ से नहीं जाने देता जब मैं ज्योतिषियों और इसी प्रकार के लोगों के विरुद्ध कुछ न कहूं। मैं समझता हूं कि ये लोग सब से अधिक अवांछनीय व्यक्ति हैं। और ये देश को बहुत हानि पहुंचाते हैं।

गृह-कार्य तथा राज्य मंत्री (डा० काटजू): फिर भी ये फल-फूल रहे हैं।

श्री जवाहरलाल नेहरू : नहीं, मुझे आशा है कि ये नहीं फले-फूलेंगे। मुझे इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं है। एक माननीय सदस्य ने अन्ध विश्वासों का उल्लेख किया था। मैं उनकी बात से सहमत हूं, किन्तु मैं इतना और कहूंगा कि ऐसे कितने लोग हैं जो किसी न किसी अंध विश्वास में विश्वास नहीं करते। यह तो प्रत्येक की अपनी सत्यधर्मावलम्बिता और दूसरे की नास्तिकता का प्रश्न है। प्रत्येक अपने अन्ध विश्वास को ठीक समझता है और दूसरे के अन्ध विश्वास को 'अन्ध विश्वास मात्र' समझता है। निस्सन्देह कुछ धार्मिक अन्ध विश्वास होते हैं, किन्तु राजनीतिक अन्ध विश्वास और आर्थिक अन्ध विश्वास तथा अन्य भी कई प्रकार के अन्ध विश्वास होते हैं। हमें इन सब अन्ध विश्वासों को दूर करना चाहिये और इन्हें दूर करने का वस्तुतः केवल एक ही तरीका है कि हम विज्ञान में लोगों की रुचि बढ़ायें और इसी कारण मैं यह समझता हूं कि सरकार ने सब से अच्छी चीज़ यह राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं की स्थापना करके की है जिनमें कि वैज्ञानिक परीक्षण किये जाते हैं।

परन्तु मैं एक और पहलू के बारे में भी यहां कुछ कहना चाहता हूं। मैं कुम्भ मेले में गया था, जैसे कि मैं पहिले भी जाता रहा हूं। जैसा कि सदन को सम्भवतः विदित है, इलाहाबाद में ही मैं पैदा हुआ था और वहीं पला था; या यों कह सकते हैं कि गंगा और यमुना के किनारे पर ही पैदा हुआ था और पला था और गंगा तथा यमुना मेरे बचपन के साथी के रूप में मुझे बहुत प्यारी हैं। जब कभी मुझे अवसर मिलता है, मुझे गंगा में नहाना बड़ा अच्छा लगता है। परन्तु मैंने पवित्र अवसरों पर वहां न नहाने का निश्चय किया हुआ है जिससे कि लोगों को भ्रान्ति न हो। यदि मुझे वहां जाने का कोई अवसर मिलता है—दुर्भाग्य से मुझे ऐसे बहुत कम अवसर मिलते हैं और मुझे इसका दुःख नहीं है—तो ऐसे अवसरों पर मैं जान-बूझ कर वहां नहीं नहाता क्योंकि लोग यह न समझें कि मैं इस चीज़ को प्रोत्साहन देना चाहता हूं।

आचार्य कृपालानी (भागलपुर व पूर्निया): परन्तु और लोग तो इससे उल्टा करते हैं।

श्री जवाहरलाल नेहरू : हो सकता है; मैं इसका उत्तर नहीं दे सकता। परन्तु मैं तो सदन को यह बताने लगा था कि नक्षत्रों या गंगा में नहाने का मेरे पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, परन्तु जहां कहीं भी भारतीय लोग बहुत बड़ी संख्या में इकट्ठे होते हैं उनका मुझ पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। मुझ पर उनका प्रभाव पड़ता है और मैं उनके जैसा बनना चाहता हूं, उन्हें समझना चाहता हूं और उन्हें अच्छे ढंग से सिखलाना चाहता हूं। इसी कारण जब मुझे अवसर मिलता है तो मैं ऐसे स्थान पर जाने का प्रयत्न करता हूं,

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

कुम्भ के मेले को देखने के लिये नहीं। मैं पहले भी मेलों में जा चुका हूं। किन्तु केवल उनकी निन्दा करने के विचार से नहीं। ये लोग बड़े अच्छे हैं। उनके अपने अन्ध विश्वास हैं। यदि मैं किसी चीज़ को गलत समझता हूं और उन्हें इसका विश्वास दिला सकूं, तो मैं उन्हें विश्वास दिलाने का प्रयत्न करता हूं। परन्तु यदि लोग जा कर गंगा में डुबकी लगा लें तो इससे मेरी कोई हानि नहीं होती और मुझे यह समझ नहीं आता कि मैं इस विषय में अपनी शक्ति को व्यर्थ नष्ट क्यों करूं जब कि मेरे दूर करने को और बहुत सी बुराइयां हैं। और फिर इसको करने के और भी ढंग हैं। मेरे मन में ऐतिहासिक भावना जाग उठती है और मैं यह सोचने लगता हूं कि लोग सैकड़ों वर्षों से ऐसा क्यों करते चले आ रहे हैं, इसके पीछे अन्ध विश्वास के अतिरिक्त और कौनसी शक्ति है? इसके पीछे ज़रूर कोई और बात होगी और मैं तो अपने आपको उनके अनुकूल बनाना चाहता हूं क्योंकि मैं भी उन में से ही एक हूं और उन्हें समझना चाहता हूं।

यह सब कुछ मैंने सदन के समक्ष निजी स्पष्टीकरण के रूप में कहा है। सदन ने मेरी बातों को जिस धैर्य से सुना है उसके लिये मैं धन्यवाद देता हूं।

श्री वीरस्वामी (मयूरम—रक्षित—अनुसूचित जातियां) : श्रीमान् राष्ट्रपति के अभिभाषण के सम्बन्ध में मैं दो तीन बातों पर प्रकाश डालना चाहता हूं। जहां तक हमारी विदेश नीति का सम्बन्ध है, मेरा विचार है कि इस सदन में तथा इससे बाहर भी लोग प्रधान मंत्री की शान्ति सम्बन्धी कोशिशों की सराहना करते हैं। देश का प्रत्येक समुदाय अथवा दल प्रधान मंत्री की विदेश नीति का अनुमोदन करता है। केवल देश का शत्रु ही इसका विरोध कर सकता है।

श्रीमान्, राष्ट्रपति के अभिभाषण से, जिसके लिये कि जनता उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही थी, देश को भारी निराशा हुई है। इसमें कोई सार नहीं था। जनता समझती थी कि शायद इसमें देश के सामाजिक तथा आर्थिक ढांचे में किन्हीं मूल परिवर्तनों की घोषणा की जायेगी, परन्तु उन्हें इसे देख कर उदासीनता हुई। श्रीमान्, ऐसे अभिभाषण का फायदा ही क्या है जिसमें कि बेकारी, निरक्षरता, छुआछूत, भिखमंगी, तथा ऐसी अन्य समस्याओं की ओर ध्यान न दिया गया हो। इन समस्याओं को हल करने के लिये कोई रास्ता नहीं दिखाया गया है। जहां तक बेकारी का सम्बन्ध है, हमें मालूम है कि किस तरह हमारे शिक्षित युवक रोज़गार की तलाश में मारे मारे फिरते हैं। कई लोगों ने काम न मिलने के कारण ही आत्म-हत्या की है। राष्ट्रपति के अभिभाषण में केवल इतना कहा गया है कि अधिक लोगों को काम दिलाने के लिये योजना आयोग पंचवर्षीय योजना का पुनरीक्षण कर रहा है। संविधान के अनुच्छेद ४३ में कहा गया है कि राज्य जनता को काम आदि दिलाने के सुविधायें देगा। वह उन्हें काम की सुविधायें न दे, परन्तु उन्हें जीवित रखने के लिये कुछ न कुछ दिया जाना चाहिये। मेरे विचार में इस अभिभाषण में वह उपाय बताये जाने चाहिये थे जो कि बेकारों को काम दिलाने के लिये किये जायेंगे अथवा उन सुविधाओं का ज़िक्र किया जाना चाहिये था जो कि बेकारों को उस समय तक मिलतीं जब तक कि उन्हें काम मिल जाता। नौकरी दिलाऊ केन्द्र बेकारों को काम दिलाने में सफल नहीं रहे हैं। तिरूचीरापल्ली में मुझे बताया गया कि राज्य सरकारें नौकरी दिलाऊ केन्द्रों को तो अपना सहयोग देती हैं परन्तु केन्द्रीय सरकार के विभाग यह सहयोग नहीं देते हैं। केन्द्रीय सरकार के विभाग इन केन्द्रों